मीरा की भक्ति-भावना

प्रो.डॉ.लियाकत मियाँभाई शेख
लोकसेवा एज्युकेशन सोसायटी संचलित
कला व विज्ञान महाविद्यालय, औरंगाबाद.
ई-मेल: shaikhliyakat03@gmail.com

मीरा भक्तिकाल की सर्वश्रेष्ठ कवयित्री है। भक्तिकालीन काव्यधारा में मीरा की कविता अपना अलग महत्व है। मीरा भक्त थी, गायिका और कवयित्री भी थी। मीरा की सबसे बड़ी विशेषता यह भी रही कि वे सम्प्रदाय मुक्त थी इसलिए वह किसी दार्शनिक सिद्धान्त या मतवाद प्रवाह में नही बही अपितु स्वतंत्र रूप से भगवत उपासना ही उनके जीवन का चरम लक्ष्य बना। मीरा संप्रदाय मुक्त तो थी ही, किसी सम्प्रदाय विशेष से प्रभावित भी नही थी- सर्वथा निर्मुक्त और सदा स्वच्छन्द। साधना-पथ में ऐसी स्वच्छन्दता साधक के अनुकूल सित्र होती है और वह निर्बंध अबाधगति से आगे बढ़ता जाता है।

मीरा के काव्य विशुद्ध-भक्ति का निदर्शन है। भक्ति उनकी साधना थी और साध्य भी या गिरधर का भजन-किर्तन करना ही उनकी साधना की चरम-सिद्धि थी। उनकी प्रेमाभक्ति में दार्शनिक तर्क-वितर्क के लिये कोई स्थान नहीं था और न ही उनके हृदय में कृष्ण के अतिरिक्त किसी अन्य का प्रवेश। उनका संपूर्ण प्रेम, सारी निष्ठा, समस्त आशा-आकांक्षाएँ गिरधर गोपाल पर केन्द्रीभूत थी। उनकी आराधिका, तन-मन से उन्हीं को समर्पित-माधुर्य-भक्ति की साकार प्रतिमा। उनकी तुलना किसी अन्य कृष्ण भक्त कवि से नहीं की जा सकती। मीरा की माधुर्य भक्ति अन्य कृष्ण भक्तों की माधुर्य-भक्ति से भिन्न थी। पुरूष होने के नाते जहाँ अन्य कृष्ण भक्तों ने अपने माधुर्य भाव को ब्रजांगनाओं या राधा के माध्यम से व्यक्त किया, वहाँ मीरा को किसी माध्यम की अपेक्षा नही रही, वे तो स्वयं ही गोपिका राधा बन गई। पुरूषों द्वारा अपने ऊपर नारी भाव का आरोपण कर माधुर्य – भाव की अभिव्यक्ति में वह स्वाभाविकता एवं सहजता नहीं आ सकती जितनी एक नारी द्वारा सम्भव है। माधुर्य भाव के लिये जिस कोटि का आत्मसमर्पण और त्याग चाहिये वह नारी-प्रकृति की ही विशेषता हो सकती है। नारी में निसर्गत: आत्म-समर्पण और त्याग का भाव होता है। वह अपने आराध्य के लिये सब कुछ समर्पित करने की क्षमता रखती है। माधुर्य भक्ति के लिये जिस कोटि का आत्म समर्पण चाहिये वह मीरा की नारी प्रकृति के अनुकूल था। इसलिए उनकी माधुर्य भक्ति अन्य भक्त कवियों की अपेक्षा सहज और स्वाभाविक है।

मीरा के विरह-वर्णन में उनकी निजी व्यथा व्यक्त है, परम्परागत विरह-दशाओं का वर्णन नहीं इसलिये वह अधिक स्वाभाविक और मार्मिक है। उनका वियोग, अनुभूत वियोग है, उनकी वेदना की अभिव्यक्ति में उनके हृदय की आर्तव्यथा है। अपने गिरधर गोपाल पर मीरा तन-मन से समर्पित हैं। उन्होंने गिरधर के लिए भाई, बन्धु सगे-स्वजनों का त्याग किया। मीरा का कान्ताभाव प्रत्यक्ष-कान्ताभाव है। उनके पदों में इस बात की पुष्टि स्थान-स्थान पर हो जाती है। ऐसा विश्वास, सर्वात्म-समर्पण की ऐसी दृढ़ता और निर्भयता, कान्ताभाव की प्रत्यक्षानुभूति में ही सम्भव है। मीरा के समस्त पद इसी संबंध की घोषणा करते हैं।

मीरा की भक्ति में पराभक्ति के निदर्शन होते है, पराभक्ति में साध्य की प्राप्ति के अलावा किसी भी साधन की आवश्यकता नहीं होती। अपरा भक्ति में भक्ति प्राप्त करने के साधनों की तितीक्षा रहती है। अतएव पराभक्ति जहाँ साध्य-स्वरूपा है, अपरा भक्ति साधन-स्वरूपा।[1] मीरा को अपने साध्य-आराध्य कृष्ण के अतिरिक्त अन्य किसी साधन की अपेक्षा नहीं थी। उनकी समस्त आशा-आकाक्षाएँ, सारे क्रिया-कलाप प्रियतम कृष्ण में केन्द्रीत थे। पराभक्ति छ: प्रकार की मानी गई है—सिद्धा, प्रेमलक्षणा, निष्कामा, दुर्लभा, अनन्या और निर्गुण। पराभक्ति के इन सभी रूप के निदर्शन हमें मीरा

की भक्ति भावना में होते है। साथ ही मीरा की भक्ति में नवधा – भक्ति के सभी नौ सोपानो का अंतर्भाव दिखाई देता है।

मीरा ने सामाजिक रूप से एकांतिक जीवन का निर्वाह किया और इस एकांत-प्रवास ने उनकी काव्य-यात्रा को अद्भूत ऊंचाई देने का कार्य किया। उनकी कविता चीख पुकार की कविता नही है, बल्कि भक्ति में डूबे हुए हृदय की आकूल गाथा है, जिसमें अपने प्रियतम के सान्निध्य को प्राप्त करने का सुखद बोध है। भक्तिकालीन काव्य में मीरा की कविता का अपना वैशिष्ट्य है। भक्ति की दृष्टि से देखें, तो मीरा की कविता को उच्चतम पराकाष्ठा की कविता कहा जा सकता है, जहाँ भक्त एवं परमात्मा का एकांतिक मिलन है। "सदाचार और नैतिक आदर्शो की उच्च सीढ़ी पर पहुँचे बिना उच्चतम कोटि की भक्ति प्राप्त नही हो सकती। मीरा ने दोनों प्राप्त कर लिया था। उनका आचरण और चरित्र ठीक उसी प्रकार आदर्श और अद्वितीय था, जिस प्रकार उनकी भक्ति। नाभादास, व्यास और ध्रुवदास ने मीरा की भक्तिभावना की प्रशंसा के साथ-ही-साथ उनके चरित्र की पवित्रता और निर्मलता का भी उल्लेख किया है। मीरा केवल भक्त ही न थी वे कवि थी, गायिका थी और सबसे बढ़कर एक शुद्ध, सरल और पवित्र हृदया मानवी थी।"[2]

मीरा के भक्ति तत्व की विशिष्टता इस बात में है कि इस मायाजनित संसार में वे कहीं सौंदर्य नही देखती। उन्हें इस संसार से पार केवल प्रभु में असल सौन्दर्य दिखाई देता है जो स्थाई और चिरंतन है। उनकी प्रेम संवेदना को चित्रित करते हुए पं.करूणाशंकर शुक्ल लिखते हैं कि "मीरा इस नश्वर जगत में अपनी प्रियतम के इस सौंदर्य के स्थायित्व को समझती है, और उस पर वे अपने को लुटा देती है। उस सौंदर्य के आगे मीरा को इस नश्वर जगत में कुछ दिखाई ही नही देता। मीरा वियोगिनी है, विरहिणी है, किंतु फिर भी वे आनंद में उन्मत बनकर गाती हैं। इसलिए वे उस प्रियतम की विरहिणी है, जो असीम है, अनंत है, अलक्ष्य है और अप्राप्य है। मीरा को अपने इस प्रियतम की विरहिणी होने पर गर्व है।"[3]

मीरा की भक्ति में आत्म निवेदन के साथ विरह-भावना, आत्म तल्लीनता, प्रेममूलक चेतना आदि के दर्शन होते है। ' भक्ति का यह प्रबल आवेग, अपने प्रियतम से मिलने की यह प्रबल उत्कंठा, जितनी तीव्र मीरा के पदों में मिलती है, उतनी और किसी भी भक्त और कवि के पदों में नही मिलती। बात यह है कि अपने प्रियतम के जितना समीप मीरा पहुँच गई थी, उतना और कोई भक्त नही पहुँच सका था।'[4] मीरा की भक्ति भावना में मिलन पक्ष की अपेक्षा विरह एवं वेदना का मर्मांतक पक्ष अधिक उद्घाटित हुआ है-

आवो मनमोहना जी मीठा थांरा बोल।
बालपने की प्रीत रमइया जी, कदे नहिं आयो थारो तोल।
दर्शन बिन मोहि जक न परत है, चित्त मेरो डाँवाडोल।
मीरा कह मैं भई रावरी, कहो तो बजाऊँ ढोल।[5]

कृष्ण की अनन्य उपासिका होने पर भी, मीरां पूजा-अर्चना के विधि-विधानों से अनभिज्ञ, एक अबोध बालिका-सी लगती है, जिसे कृष्ण के आगे नाचते गाने के अतिरिक्त पूजा का और कोई ढंग नहीं आता। मीरां का यही भोलापन उन्हें भक्तों की पक्ति में सबसे अलग स्थान प्रदान करता है। उनकी भक्ति में अबोध कौमार्य की ऐसी सुरभि है, जो दिगंत-व्यापी भी है और स्थायी भी। मीरा का प्रेम-भाव परकीया होकर भी मीरा भावनाएँ स्वकिया की भाँति परन्तु परकीया सी उसमें प्रगाढ़ता है, विह्वलता है और मिलन की आतुरता है। उनका प्रेम सर्वत्र संयत, शिष्ट और मर्यादित है। इन्हीं विशेषताओं के कारण मीरा की अनुरक्ति राधा की अनुरक्ति-सी प्रतीत होती है और मीरां स्वयं राधा की अवतार-सी लगती है। मीरा जिस कोटि की भक्त थी, उन से भक्ति के अतिरिक्त अन्य किसी कला-साधना की संभावना भी कम ही प्रतीत होती है। वे तन-मन से कृष्ण को समर्पित थी। भक्ति उनकी साधना थी, जीवन का एकमात्र लक्ष्य।

हिंदी की भक्तिकालीन काव्य-धारा में मीरा का स्थान अपनी प्रेम भावना एवं उदग्र विरही चेतना के कारण सर्वोपरि रहेगा। हिंदी काव्य जगत में मीरा का स्थान ध्रुव-तारा के समान है जो नक्षत्रों में सबसे भिन्न, सबसे एकाकी और सबसे देदीप्यमान दिखता है। मीरा जिस रूप में जनकंठ में बस गई है, युग-युगान्तर तक बसी ही रहेगी। और भक्तों के लिए यह संजीवनी बनकर अमिय सुख संचरित करेगी।

संदर्भ सूची –

1. मीरा स्मृति ग्रंथ - ललिता प्रसाद सुकूल, पृ.191।
2. मीराबाई जीवन चरित और आलोचना - डॉ.श्रीकृष्णलाल, पृ.79।

3. हिंदी काव्य की कलामयी तारिकाएँ - पं.करूणाशंकर शुक्ल, पृ.13-14।
4. मीराबाई जीवन चरित और आलोचना - डॉ.श्रीकृष्णलाल, पृ.99।
5. मीरा बृहत पदावली - फतहसिंह, पृ.18।

Aayushi International Interdisciplinary Research Journal
ISSN 2349-638X
www aiirjournal.com